‘दादा लेखराज’ से ‘प्रजापिता ब्रह्मा’ तक का अलौकिक सफर

प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय के साकार संस्थापक पिताश्री प्रजापिता ब्रह्मा के नाम से आज जन-जन भिज्ञ हो चुका है। सन् 1937 से सन् 1969 तक की 33 वर्ष की अवधि में तपस्यारत रह वे ‘सम्पूर्ण ब्रह्मा’ की उच्चतम स्थिति को प्राप्त कर आज भी विश्व सेवा कर रहे हैं। उनके द्वारा किए गए असाधारण, अद्वितीय कर्तव्य की मिसाल, सृष्टि-चक्र के 5 हजार वर्षों के इतिहास में कहीं भी मिल ही नहीं सकती। अल्पकालिक और आंशिक परिवर्तनों के पुरोधाओं की भीड़ से हटकर उन्होंने सम्पूर्ण और सर्वकालिक परिवर्तन का ऐसा बिगुल बजाया जो परवान चढ़ते-चढ़ते सातों महाद्वीपों को अपने आगोश में समा चुका है। वे आज की कलियुगी सृष्टि का आमूल-चूल परिवर्तन कर इसे सतयुगी देवालय बनाने की ईश्वरीय योजनानुसार, परमपिता परमात्मा शिव के भाग्यशाली रथ बने। जैसे हुसैन की शान बहुत थी परन्तु जिस घोड़े पर वे सवार होते थे, उसकी शान भी कम नहीं थी। इसी प्रकार सर्वशक्तिवान, सर्वज्ञ, सर्व रक्षक परमात्मा शिव की महिमा अपरमपार है परन्तु जिस मानवीय रथ (Human Chariot) पर सवार हो वे विश्व परिवर्तन का कर्तव्य करते हैं उसकी आभा, प्रतिभा का वर्णन भी कम नहीं है। आखिर दादा लेखराज के जीवन के वे कौन-से गुण थे, कौन-सी विशेषतायें थीं, जो भोलानाथ शिव उन पर आकर्षित हो गए, उनके तन में सन्निविष्ट हो गए और विश्व परिवर्तन जैसे असम्भव दिखने वाले कार्य के निमित्त उन्हें बना दिया।

आइये, पिताश्री के जीवन-सागर में अवगाहन कर कुछ गुण-मोती चुन लें:

पिताश्री का दैहिक जन्म हैदराबाद (सिन्ध) में एक साधारण परिवार में हुआ था। उनका शारीरिक नाम ‘दादा लेखराज’ था। उनके लौकिक पिता निकट के गाँव में एक स्कूल के मुख्याध्यापक थे। दादा लेखराज अपनी विशेष बौद्धिक प्रतिभा, व्यापारिक कुशलता, व्यावहारिक शिष्टता, अथक परिश्रम, श्रेष्ठ स्वभाव एवं जवाहरात की अचूक परख के बल पर सफल व प्रसिद्ध जवाहरी बने। उनका मुख्य व्यापारिक केंद्र कोलकाता में था।

भक्ति-भावना और नियम के पक्के

जवाहरात के व्यवसाय के कारण पिताश्री का सम्पर्क उस काल के राजपरिवारों से काफी घनिष्ट हो गया। विपुल धन-सम्पदा और मान-प्रतिष्ठा पाकर भी उनके स्वभाव में नम्रता, मधुरता और परोपकार की भावना बनी रही। उन्होंने किसी भी परिस्थिति में, किसी भी प्रलोभन के वश अपनी भक्ति-भावना और धार्मिक नियमों को नहीं छोड़ा। कई बार ऐसा होता था कि कुछ राजाओं तथा धनाढ्य व्यापारियों का दादा के यहाँ भोज होता तो भी दादा उन्हें शुद्ध शाकाहारी भोजन ही देते। कई बार ऐसा भी संयोग होता कि किसी राजा या अन्य विशिष्ट व्यक्ति का दादा के यहाँ अतिथि के तौर पर गाड़ी द्वारा ऐसे समय पर आना होता जब दादा के भक्ति-पूजा या गीता-पाठ का समय होता, तब दादा उनके स्वागत पर स्वयं न जाकर अन्य किसी को भेज देते परन्तु वे नित्य-नियम न तोड़ते। इस प्रकार, वे दृढ़ प्रतिज्ञ एवं नियम के पक्के थे। वे श्री नारायण की अनन्य भक्ति किया करते थे और उनका चित्र सदा अपने पास रखा करते थे।

प्रभावशाली व्यक्तित्व और मधुर स्वभाव

दादा प्रभावशाली व्यक्तित्व के मालिक थे। उनका मस्तिष्क उन्नत, शरीर सुडौल, मुखमण्डल कांतियुक्त और होंठों पर सदा मुस्कान रहती थी। 90 वर्ष की आयु में भी वे सीधी कमर बैठ सकते थे, दूर तक अच्छी रीति देख सकते थे, धीमी आवाज़ भी सुन सकते थे, पहाड़ों पर चढ़ सकते थे, बैडमिन्टन खेल सकते थे और बिना किसी सहारे के चलते थे। वे प्रतिदिन 18-20 घण्टे कार्य करते थे। इससे अंदाज़ा लगाया जा सकता है कि उनका जीवन कैसे संयम-नियम से युक्त तथा स्वस्थ रहा होगा। आलस्य और निराशा ने तो कभी उनका स्पर्श तक नहीं किया। राजकुलोचित व्यवहार, शिष्ट-मधुर स्वभाव और उज्ज्वल चरित्र के कारण उनकी उच्च प्रतिष्ठा थी। दादा स्वभाव से ही उदारचित्त और दानी थे। हैदराबाद के प्रसिद्ध दानी ‘काका मूलचन्द आजवाला’ उनके चाचा थे। दादा भी उनके साथ ही उनकी बैठक पर पीड़ित

लोगों को खूब दान दिया करते थे।

अलौकिक जीवन का प्रारम्भ – दिव्य साक्षात्कारों द्वारा

दादा का व्यापारिक और पारिवारिक जीवन, लौकिक दृष्टि से सफल एवं संतुष्ट जीवन था परन्तु जब दादा लगभग 60 वर्ष के थे तब उनका मन भक्ति की ओर अधिक झुक गया। वे अपने व्यापारिक जीवन से अवकाश निकालकर ईश्वरीय मनन-चिन्तन में लवलीन तथा अन्तर्मुखी होते गए। अनायास ही एक बार उन्हें विष्णु चतुर्भुज का साक्षात्कार हुआ और उसने अव्यक्त शब्दों में दादा से कहा – 'अहम् चतुर्भुज तत् त्वम्' अर्थात् आप अपने वास्तविक स्वरूप में श्री नारायण हो। कुछ समय के बाद वाराणसी में वे अपने एक मित्र के यहाँ एक वाटिका में जब ध्यान अवस्था में थे, तब उन्हें परमपिता परमात्मा ज्योतिर्लिंगम् शिव का साक्षात्कार हुआ और उन्होंने इस कलियुगी सृष्टि का अणु व उदजन बमों तथा गृहयुद्धों और प्राकृतिक आपदाओं द्वारा महाविनाश होते देखा। दादा को जिन दिनों यह साक्षात्कार हुआ, उन दिनों अमेरिका और रूस ने ऐसे बम नहीं बनाये थे। जब दादा को ये साक्षात्कार हुए, तो उन्हें अन्त:प्रेरणा हुई कि अब व्यापार को समेटना चाहिए। अत: दादा ने कोलकाता में जाकर अपने भागीदार को अपने दृढ़ संकल्प से अवगत कराया और फिर दादा व्यापार से अलग हो गये।

परमपिता परमात्मा शिव का दिव्य प्रवेश

इसके कुछ ही दिनों के बाद, एक दिन जब दादा के घर में सत्संग हो रहा था, तब दादा अनायास ही सभा से उठकर अपने कमरे में जा बैठे और एकाग्रचित्त हो गये। तब उनके जीवन का सबसे महत्वपूर्ण वृत्तांत हुआ। उनकी धर्मपत्नी व बहू ने देखा कि दादा के नेत्रों में इतनी लाली थी कि जैसे उनके अंदर कोई लालबत्ती जग रही हो। दादा का कमरा भी प्रकाशमय हो गया था। इतने में एक आवाज़ ऊपर से आती हुई मालूम हुई जैसे कि दादा के मुख से दूसरा कोई बोल रहा हो। आवाज़ के ये शब्द थे –

'निजानन्द रूपं, शिवोऽहम् शिवोऽहम्
ज्ञान स्वरूपं, शिवोऽहम् शिवोऽहम्
प्रकाश स्वरूपं, शिवोऽहम् शिवोऽहम्।'

फिर दादा के नेत्र बंद हो गये। कुछ क्षण के पश्चात् जब उनके नयन खुले तो वे कमरे में आश्चर्य से चारों ओर देखने लगे। उनसे जब पूछा गया कि वे क्या देख रहे हैं तो उनके मुखारविन्द से ये शब्द निकले – 'वह कौन था? एक लाइट थी। कोई माइट (might, शक्ति) थी। कोई नई दुनिया थी। उसके बहुत ही दूर, ऊपर सितारों की तरह कोई थे और जब वे स्टार (star) नीचे आते थे तो कोई दैवी राजकुमार बन जाता था तो कोई दैवी राजकुमारी बन जाती थी। उस लाइट और माइट ने कहा – यह ऐसी दुनिया तुम्हें बनानी है।' परन्तु मैं ऐसी दिव्य दुनिया कैसे बना सकूँगा? वह कौन था? कोई माइट थी, एक लाइट थी..।

वास्तव में दादा के तन में परमपिता परमात्मा शिव ने ही प्रविष्ट होकर (निजानन्द रूपं,...) ये महावाक्य उच्चारण किये थे। उन्होंने ही दादा को नई सतयुगी दैवी सृष्टि की पुनर्स्थापना के लिए निमित्त बनने का निर्देश दिया था। अब दादा परमात्मा शिव के साकार माध्यम बने। ज्योतिबिन्दु परमात्मा शिव ब्रह्मलोक से आकर दादा के तन में प्रविष्ट होते और उनके मुख द्वारा ज्ञान एवं योग के ऐसे अद्भुत रहस्य सुनाकर चले जाते जो प्राय: लुप्त हो चुके थे।

परिस्थितियाँ ही परमपुरुष का आह्वान करती हैं

उन दिनों देश-विदेश में प्राय: लोगों की ऐसी दशा थी कि वे माँस, मदिरा इत्यादि का खूब सेवन करते थे। नारी का तिरस्कार होता था। पुरुष वर्ग नारी को विषय-वासना की ही गुड़िया मानते थे। वास्तव में, संसार-भर में लोग काम-क्रोधादि विकारों के वशीभूत थे और इसे ही स्वाभाविक जीवन माने हुए थे। दैवी सम्पदा प्राय: मिट चुकी थी और आसुरी सम्पदा का बोलबाला था। अत: परमपिता परमात्मा शिव ने धर्म-ग्लानि के ऐसे समय पर दादा को निमित्त बनाकर विश्व

में सदाचार, निर्विकारिता एवं पवित्रता अर्थात् दैवी सम्पदा की पुनर्स्थापना का कार्य शुरू किया। दादा, परमपिता शिव द्वारा बताये हुए नियमों का पालन करने में सबसे आगे-आगे थे।

दादा के मुख द्वारा परमपिता शिव ने बताया कि सभी दु:खों एवं समस्याओं का मूल देह-अभिमान एवं छह मनोविकार– काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार और आलस्य है। अत: इन पर विजय पाना जरूरी है। इसलिए हरेक को आहार-विहार, संग इत्यादि को सात्विक बनाने के लिए कहा गया तथा यह बताया गया कि विश्व एक अभूतपूर्व चारित्रिक संकट के दौर से गुज़र रहा है; इसलिए अब सभी को ब्रह्मचर्य का पालन करना जरूरी है। इसके बिना योगी बनना अथवा अन्य विकारों पर पूर्ण विजय पाना असम्भव है। इस शिक्षा से कुछ विकारी लोगों ने सोचा कि हमसे भोग के विषय छीने जा रहे हैं। उनका हृदय विदीर्ण हो उठा। उन्होंने हल्ला-गुल्ला किया। दादा के भवन को भी आग लगा दी। हर प्रकार से कीचड़ उछाला और बंधन डाले। उन बेचारों को क्या मालूम कि ये वाणी दादा की न थी बल्कि पतित-पावन परमपिता परमात्मा शिव ही दादा को तथा विश्व के हर नर-नारी को स्वयं यह आदेश दे रहे थे और उस सर्वशक्तिमान का कल्याणकारी कार्य रुक नहीं सकता था। अत: उन सभी के कड़े विरोध और रुकावटों के बावजूद भी प्रभु से सच्ची लगन वाले तथा पवित्रता प्रेमी नर-नारी प्रतिदिन सत्संग में आते रहे।

मरजीवा जन्म होने पर उनका नाम – 'प्रजापिता ब्रह्मा'

पिताश्री ने विरोध करने वालों के प्रति भी घृणा नहीं की बल्कि उनके प्रति भी उनकी कल्याण-भावना सदा बनी रही। उन्होंने सब प्रकार की कड़ी आलोचना सही, विरोधियों का सामना किया परन्तु परमात्मा के आदेश का पालन किया। इस प्रकार, यह नया आध्यात्मिक जीवन प्रारम्भ होने पर अथवा मरजीवा जन्म होने पर, परमपिता परमात्मा शिव ने दादा को नाम दिया – 'प्रजापिता ब्रह्मा।' उनके मुखारविन्द द्वारा ज्ञान सुनकर पवित्र बनने का पुरुषार्थ करने वाले नर-नारी क्रमश: 'ब्रह्माकुमार' और 'ब्रह्माकुमारी' कहलाये।

प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय की स्थापना

पिताश्री ने श्रेष्ठ पुरुषार्थ करने वाली कन्याओं एवं माताओं (ब्रह्माकुमारियों) का ही एक ट्रस्ट बनाकर अपनी समूची चल एवं अचल सम्पत्ति उस ट्रस्ट को, मानव-मात्र की ईश्वरीय सेवा में समर्पित कर दी। इस प्रकार, सन् 1937 में **'प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय'** की स्थापना हुई। लगभग 14 वर्षों तक ईश्वरीय ज्ञान तथा दिव्य गुणों की धारणा का और योग-स्थित होने का निरंतर अभ्यास करने के बाद अर्थात् तपस्या के बाद, सन् 1951 में जब यह ईश्वरीय विश्व विद्यालय आबू पर्वत (राजस्थान) पर स्थानांतरित हुआ तब से लेकर अब तक ब्रह्माकुमारियाँ और ब्रह्माकुमार बहनें-भाई समूचे विश्व की ईश्वरीय सेवा में संलग्न हैं।

सन् 1969 में पिताश्री ने दैहिक कलेवर का परित्याग कर सम्पूर्णता को प्राप्त किया। उनके अव्यक्त सहयोग से ईश्वरीय सेवायें पहले की अपेक्षा द्रुत गति से बढ़ी जो आज विश्व भर में 137 देशों में फैल चुकी हैं। सूक्ष्म रूप में आज भी बाबा हर बच्चे को अपने साथ का अनुभव कराते हुए कदम-कदम पर सहयोग, स्नेह और प्रेरणाएँ प्रदान कर रहे हैं। बाबा का जाना ऐसा ही है जैसे कोई अपना कमरा और कपड़ा बदल लेता है। साकार के स्थान पर सूक्ष्म लोक में उनका वास है और साकार शरीर के स्थान पर आकारी फ़रिश्ता रूप में वे नित्य ही बच्चों से मिलन मनाते हैं। छत्रछाया बन बच्चों को निरंतर सुरक्षाकवच प्रदान करने वाले पिताश्री जी को उनकी 48वीं पुण्यतिथि पर शत्-शत् नमन!

ईश्वरीय सेवा में,

....

दिनांक :..............................